Year-4 Volume: I, Jan-March, 2022 ISSN: 2582-1296
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities

# संयुक्त परिवारों का टूटन, तलाक और स्त्री की आजादी

**विजय कुमार यादव**
शोधार्थी, पीएच.डी.
हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
ईमेल- vijay275001@gmail.Com

**सार**

*सत्तर के दशक से 21वीं सदी के मुहाने तक के सफ़र में बहुत कुछ बदला, लेकिन स्त्रियों की स्थिति में बहुत अधिक बदलाव नहीं हुआ। जिसे बदल जाना चाहिए था पीढ़ियों के बदलाव के साथ, लेकिन रह गया जस का तस ही। परिवार की बंदिशे स्त्री के लिए आज भी सबसे बड़ी बाधा है। चाह कर स्त्रियाँ पारिवारिक संस्था को तोड़ नहीं पाई हैं। स्त्रियों के चौखट लांघने भर से न जाने क्या-क्या टूटने लगता है। पितृसत्ता की चूलें हिलने लगती हैं। ऐसे में सबसे पहले स्त्री को उसका परिवार याद दिलाया जाता है और बच्चों के मोह में अपना सब कुछ त्याग देने की दुहाई दी जाती है। इसलिए स्त्रियों को ही 'आपका बंटी' के सवाल से जूझना पड़ता है और अपनी कथा कहने के लिए 'वाइपास' के रास्ते जाना पड़ता है। स्त्री जीवन की उबड़-खाबड़ सच्चाइयों को अभिव्यक्त करने के लिए मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' लिखकर स्त्री जीवन की त्रासदी को व्यक्त किया है। तो वही 21वीं सदी के मुहाने पर यानी 1998 में अलका सरावगी ने 'कलि कथा बाया बाइपास' लिखकर मारवाड़ी स्त्रियों की जीवन संघर्ष को उद्घाटित किया। इस आलेख में इन दोनों लेखिकाओं के उपन्यास के माध्यम से पितृसत्ता की सबसे मजबूत संस्था विवाह और परिवार की जो वर्तमान संरचना है और उसमें स्त्री जीवन किस रूप में है, और स्त्रियाँ किस तरह से इस दमनकारी व्यवस्था से निकलना चाहती हैं का विश्लेषण किया गया है।*

**मुख्य शब्द** - विवाह, परिवार, तलाक, अस्तित्व, पितृसत्ता, परंपरा, मारवाड़ी समाज

## प्रस्तावना

घर के दरवाजों की सांकलें स्त्रियों के लिए अक्सर बंद ही रहे हैं। जब कभी स्त्रियों ने उसे खटकाया तो उस पर तोहमत (आरोप) ही लगे, फिर भी स्त्रियों ने कभी हिम्मत नहीं हारी और वे सांकले भी टूटी। सांकलों

के टूटने में स्त्रियों के हिम्मत के साथ ही बदलते आर्थिक, सामाजिक परिदृश्य ने भी अहम् भूमिका निभाई। घर की ड्योढ़ी से निकलकर जैसे ही स्त्रियों ने खुली हवा में सांस लिया, हवा भी स्त्रियों के साथ हो ली, और मजबूत पितृसत्तात्मक पारिवारिक संस्था की नींव दरकने लगी। स्त्रियों के घर से बाहर निकलने, अपने अधिकार जानने और मनुष्य होने की गरिमा का भान होने मात्र से ही परिवार नामक संस्था में दरार पड़ने लगी, जबकि अभी तो स्त्रियों ने अपने अधिकार और उन पर होते रहे शोषण का हिसाब भी नहीं मांगा है। स्त्रियों के शोषण, अत्याचार और उनके अधिकारों को पुरुष लेखकों द्वारा सहानुभूति के साथ कुछ अवश्य लिखा गया, लेकिन जिस तरह से पुरुषों के व्यक्तिगत भाव, मनोदशा, बेरोजगारी, परिवार चलाने का संघर्ष, कुंठा, संत्रास, अकेलापन आदि को कथा के केंद्र में रखा गया, वैसा भाव स्त्रियों के सन्दर्भ नहीं आ पाया। स्त्री लेखिकाओं ने जब स्त्रियों के जीवन को केंद्र में रखकर लिखना शुरू किया तो उनके लेखन को उस रूप में नहीं देखा गया जिस तरह से पुरुष लेखकों को आलोचकों ने देखा और उसे आगे बढ़ाया।

**शोध प्रविधि-** प्रस्तुत शोध आलेख में विश्लेषणात्मक, आलोचनात्मक एवं नारीवादी दृष्टिकोण का प्रयोग किया गया है। दोनों लेखिकाओं के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री जीवन और समाज विशेलषित करने के लिए नारीवादी दृष्टिकोण का सहारा लिया गया गया है।

**उद्देश्य-**

- 'आपका बंटी' और 'कलिकथा वाया बाईपास' के माध्यम से स्त्री जीवन को उद्घाटित करना।
- बदलते दौर में संयुक्त परिवारों का टूटन और बंदिशों से मुक्त होती स्त्री जीवन को उद्घाटित करना।

## विवेचन एवं विश्लेषण

मन्नू भंडारी ने जब लिखना शुरू किया तो वह संक्रमण का दौर था। नए तरह के परिवार बन रहे थे। रोजगार के नाम पर गाँव से पलायन हो रहा था। संयुक्त परिवार में दरार पड़ने लगी थी और शहरों में एकल परिवार की संरचना अधिक प्रभावी होने लगी थी। ऐसे में स्त्रियों की जिम्मेदारी और अधिक बढ़ गई। और कहीं कहीं तो स्त्रियों को ही परिवार तोड़ने वाली के रूप में चिन्हित किया जाने लगा। इस दौर में सबसे अधिक मध्यवर्गीय परिवारों की संरचना में बदलाव हुए और इस बदलाव की वाहक महिलाएं बनीं। इस दौर में मध्यवर्गीय महिलाएं अपने अस्तित्व एवं अस्मिता को लेकर मुखर हो रही थीं। अपनी स्वतंत्र

पहचान को लेकर भी महिलाओं ने जद्दोजहद करना शुरू कर दिया था जो आज भी जारी है। एक स्त्री को दोहरी जिम्मेदारी निभाते हुए अपने अस्तित्व और परिवार को बचाने और संतुलित रहने की चिंता थी जिससे वह निकल नहीं पाती है। मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से स्त्रियों को इस चिंता से मुक्त करने का भरसक प्रयास किया है। चूँकि मन्नू भंडारी ने नए बनते भारत को देखा और उसमें स्त्रियों जीवन की उस घुटन को भी जांचा-परखा जो पुरुषों के हिस्से नहीं आता। यही कारण है कि वह अपने कथा साहित्य में स्त्रियों के संघर्ष और चुनौती को रचती हैं।

मन्नू भंडारी ने जब लिखना शुरू किया तो वह दौर आजादी से मोहभंग का दौर था। आजादी से जो उम्मीद लोगों ने पाल रखी थी वह पूरा नहीं हो पा रहा था। शहरों में बढ़ते रोजगार के संसाधनों के कारण ग्रामीण युवक शहरों की ओर पलायन कर रहे थे और नई बनती पूँजी के कारण संयुक्त परिवारों में टूटन भी हो रहा था। नव विवाहित दंपत्ति शहरों में आकर एकाकीपन का जीवन जीने को अभिसप्त हो रहे थे, जिसको आधार बनाकर अनके कहानियां और उपन्यास लिखे गए। लेकिन स्त्री की पीड़ा, संत्रास, घुटन को सबसे पहले मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों एवं उपन्यास के माध्यम से कथा जगत को परिचित कराया। 'आपका बंटी' उपन्यास में मन्नू भंडारी ने एक स्त्री के अस्तित्व, उसकी गरिमा और आजादी, टूटते वैवाहिक संबंध, परिवार के बदलते स्वरूप को उजागर किया है। साथ ही टूटते वैवाहिक संबंधों के कारण बच्चों पर पड़ने वाले प्रभाव के मनोविज्ञान को भी केंद्र में रखा गया है। इसलिए यह दुविधा होती है कि यह एक स्त्री के अस्तित्व की कहानी है या नौ वर्ष के बच्चे बंटी की। इस उपन्यास का जो उलझन है वही उलझन आज भी स्त्री के साथ बनी हुई है। बच्चों के परिवरिश की पूरी जिम्मेदारी स्त्रियों की है और रिश्ता टूटने की पूरी तोहमत भी स्त्री के मत्थे मढ़ दिया जाता है। हर बार स्त्री को अपना सबकुछ दाँव पर लगाना पड़ता है। यदि स्त्री को अपना अस्तित्व बचाए रखना है तो उसे घर से बाहर निकलना पड़ता है। घर-परिवार से जैसे ही वह बाहर निकलती है तो पारिवारिक जीवन खतरे में पड़ने लगता है। स्त्री दोधारी तलवार पर खड़े होकर दोनों में सामंजस्य बैठाने का प्रयास करती है, लेकिन वह बहुत सफल नहीं हो पाती। ऐसे में उसे किसी एक को ही चुनना पड़ता है। यदि वह अपने अस्तित्व को बचाने के लिए आगे आती है तो उसे शकुन के रास्ते पर जाना पड़ता है।

मन्नू भंडारी 'आपका बंटी' में स्त्री के अस्तित्व के साथ खड़ी होती हैं। शकुन अपने अस्तित्व से कोई समझौता नहीं करती, इसलिए वैवाहिक संबंध को बचाने की अपनी अकेली जिम्मेदारी नहीं समझती

Year-4 Volume: I, Jan-March, 2022 ISSN: 2582-1296
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities

है और न ही अपनी महत्वाकांक्षा की गला ही घोटती है। आखिर हो भी क्यों न? दांपत्य जीवन जब स्त्री और पुरुष के बराबर की बात करता है तो उसे जीवन में दिखना भी चाहिए। आखिर स्त्री ही हर बार क्यों अपनी अस्मिता और अस्तित्व से समझौता करे। राजेंद्र यादव इस उपन्यास के केंद्रीय पक्ष पर बात करते हुए कहते हैं- "मन्नू ने 'आपका बंटी' में इन तीनों को लिया है। टूटते वैवाहिक संबंधों में संतान की मनोवैज्ञानिक स्थिति, वैवाहिक संबंध भी टूटने-जुड़ने की प्रक्रिया से गुजरेंगे और इस असुरक्षित दुनिया में स्त्री अपने मानसिक प्रलय की कथाएँ भी खुलकर बयान करेंगी- मगर इस सब की मनोवैज्ञानिक दहशत भुगतनी होगी बंटी यानी संतान को। (यादव, 299)

स्त्री विमर्श के पैरोकार राजेंद्र यादव भी यहाँ स्त्री की अपेक्षा संतान पर अधिक जोर देते हैं। हमारी सामाजिक संरचना में भी यही है कि पुरूष तलाक लेकर दूसरा विवाह कर सकता है, लेकिन स्त्री के लिए यही कार्य करने पर परिवार और समाज तोहमत लगाने लगता है। मन्नू भंडारी ने इस सारी तोहमतों, परंपराओं एवं आधुनिकता की दुविधा के बावजूद स्त्री के अस्तित्व को अहमियत दिया हैं। शकुन लगातार अपने अस्तित्व के बारे में सोचती है और स्वयं से सवाल भी करती है-"दस वर्ष का यह विवाहित जीवन- एक अँधेरी सुरंग में चलते जाने की अनुभूति से भिन्न न था। आज जैसे एकाएक उसके अंतिम छोर पर आ गई है, पर आ पहुँचने का संतोष भी तो नहीं है। ढकेल दिए जाने की विवश कचोट भर है। पर कैसा है यह छोर? न प्रकाश, न खुलापन न मुक्ति का अहसास।"(भंडारी, 37) घुटन से जिस मुक्ति की तलाश एक स्त्री को रही है वह तलाश आज भी जारी है। शकुन अंधरे पारिवारिक संबंधों से बाहर निकलने का साहस तो करती है, लेकिन इस छोर पर उजास है, दोपहर की चमक नहीं।

20 वीं सदी के अंतिम दशक में अलका सरावगी ने 'कलि कथा बाया बाईपास' मारवाड़ी संस्कृति, कलकत्ते का समाज, रूढिग्रस्तता के पाटन के उच्च वर्गीय परिवारों की स्त्रियों का जो चित्र खींचा है उसके लिए एक अलग रास्ता 'बाईपास' का सहारा लिया है। मन्नू भंडारी ने स्त्रियों की आजादी एवं अस्तित्व के लिए 1970 के दशक में जो बात सीधे तौर पर कही, वही बात अलका सरावगी को कहने के लिए 'बाईपास' का सहारा लेना पडा। मारवाड़ी समाज के छ: पीढ़ियों की कथा समेटे इस उपन्यास में परंपरागत रूढ़ियाँ इस कदर हावी है कि कथा नायक किशोर बाबू स्त्रियों के शोषण के प्रति सहानुभूति तो रखते हैं, लेकिन सामाजिक एवं पारंपरिक बेड़ियों को तोड़कर व आगे नहीं आ पाते, बल्कि उसी खोल में वापस चले जाते हैं जहाँ से उन्होंने अपनी जीवन यात्रा शुरू की थी। मारवाड़ी स्त्रियों के

Year-4 Volume: I, Jan-March, 2022 ISSN: 2582-1296
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities

जीवन के बारे में किशोर बाबू सोचते हैं- "कैसी जिन्दगी है हमारे घरों में औरतों की। सारे दिन घर में बंद रहती हैं। कभी बाहर निकलना हुआ, तो जरीदार ओढ़नी ओढ़कर गरदन तक घूंघट डालकर।'' (सरावगी, 60) किशोर बाबू को स्त्रियों की स्थिति पर तरस आता है, लेकिन जब उन्हीं के घर की स्त्री परपंरा और रूढ़ियों को दरकिनार करने की कोशिश करती हैं तो वे आगे आकर परंपरा और लोक-लाज की दुहाई देने लगते हैं। किशोर बाबू की विधवा भाभी यह सोच कर प्रसन्न है कि आज उनके यहाँ जो लोग आएंगे वह आधुनिक विचार के पढ़े-लिखे लोग हैं। ''आज तो सब पढ़े-लिखे लोगों की जमात आएगी- खुले विचारों वाली। आज यह साड़ी (खुशनुमा रंग के किनारी की) पहनने में कोई हर्ज नहीं।

बिना कनेर की सफेद साड़ियाँ पहनते-पहनते उकता भी चली हैं। बहुत प्रसन्न मन से वे साड़ी पहनकर शरमाती हुई कमरे से बाहर निकलीं।"(सरावगी, 61) किशोर बाबू उस समाज व्यवस्था को बनाए रखना चाहते हैं, उन्हें यह नागवार गुजरता है और वह समाज की दुहाई देकर भाभी को खरी-खोटी सुनाते हैं। ''तुम्हारा दिमाग क्या अब एकदम ही खराब हो गया है भाभी? उम्र बढ़ने के साथ-साथ आदमी की अक्ल बढ़ती है, पर मुझे लगता है यू.पी. (उत्तर प्रदेश) वालों की अक्ल कम होने लगती है। यह क्या इतने चटक-मटक रंग की साड़ी पहनी है। क्या कहेंगे लोग देखकर। कुछ तो मर्यादा रखी होती समाज में।''(सरावगी, 61) किशोर बाबू की विधवा भाभी इसका प्रतिकार भी नहीं कर पातीं। किशोर बाबू अपनी बेटियों को पढ़ने से नहीं रोकते, लेकिन अधिक पढ़ाना भी नहीं चाहते। मारवाड़ी समाज में स्त्रियों के लिए जो पर्दा है, घर से बाहर न निकलने की वह व्यवस्था आज भी कायम है, से वे महिलाओं को बाहर निकलते देखना चाहते हैं, लेकिन उनकी पितृसत्तात्मक सोच स्त्रियों को स्वतंत्र जीवन जीने में बाधक बनती है।

किशोर बाबू स्त्रियों को 'पिंजरे की मैना' की तरह ही रखना चाहते हैं। "सारी लड़कियों को उन्होंने कॉलेज भेजा- यह अलग बात है कि उनमें से दो ने ही बी.ए. पास किया बाकी सबकी बीच में ही शादी हो गई। उन्हें पढ़ाया-लिखाया, पर लड़कियों को रखा हमेशा एक सीमा में। कभी उन्हें बरामदे में खड़े नहीं होने नहीं दिया ताकि सड़क के लोग उन्हें देख सके। बस सड़क से उन्हें इतना ही जुड़ने दिया कि वे घर के दरवाजे से फुट-पाथ पार कर बाहर खड़ी गाड़ी में बैठ जाए। कभी लड़कियों को अपनी सहेलियों के घर नहीं जाने दिया। सहेलियों के साथ सिनेमा नहीं जाने दिया। कई बार लड़कियों ने रोना-धोना किया अपनी दादी के सामने, पर किशोर बाबू टस-से-मस न हुए। इतनी बड़ी 'रिस्क' वे कैसे ले सकते थे? समाज में

Year-4 Volume: I, Jan-March, 2022 ISSN: 2582-1296
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities

एक बार किसी बात की हवा उड़ गई, तो हमेशा के लिए बदनाम हो जाएंगे। इतने बरसों का किया-कराया सब धरा का धरा रह जाएगा। पिंजरे के पक्षी को जन्म से ही पिंजरे में रखा जाए, तो कष्ट नहीं मानता। पर एक बार खुले आकाश में छोड़कर पिंजरे में बंद कर दें, तो वह अपना खाना-पीना छोड़ देता है। आखिर लड़कियों को पराए घर जाना है, घर-गृहस्थी संभालनी है। ज्यादा पर निकाल लिए तो मुसीबत हो जाएगी।"(सरावगी, 202) अलका सरावगी ने किशोर बाबू के माध्यम से मारवाड़ी समाज में स्त्रियों की जो स्थिति है उसे आधुनिक परिपेक्ष्य के साथ यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है।

भूमंडलीकरण का दबाव हमारे समाजिक सांस्कृतिक चेतना में किस तरह से प्रवेश करा रहा है और उसके बावजूद भी पितृसत्तात्मक सोच में बहुत अधिक बदलाव नहीं पाया है। किशोर बाबू लड़कियों को उतना ही शिक्षा देने के पक्ष में हैं जितने से उनके विवाह में कोई समस्या न हो। वे अपनी बेटियों के सन्दर्भ में कहते हैं- "ज्यादा पढ़ लेती तो ज्यादा पढ़े-लिखे लड़के की जरूरत होती। आखिर संभालनी तो घर-गृहस्थी ही है लड़कियों को कोई हुंडी का भुगतान थोड़ी ही करना है।"(सरावगी 158) अलका सरावगी के अपने इस उपन्यास में स्त्री के शोषण की बात तो करती हैं, लेकिन उसे उस रास्ते पर पर लेकर नहीं जाती जिस रास्ते पर चलकर मन्नू भंडारी ने एक स्त्री के अस्तित्व के सवाल को खड़ा किया है।

स्त्री एक झटके में तलाक लेने एवं परिवार से अलग होने का निर्णय नहीं ले पाती। शकुन ने भी पत्नी एवं माँ के अस्तित्व के लिए संघर्ष किया है। बाहर से देखने में शकुन का जीवन बहुत ही सुखमय प्रतीत होता है, लेकिन अन्दर ही अन्दर एकाकीपन और घुटन इतना कि उसे कहीं व्यक्त भी नहीं किया जा सके। "बाहर से तो तब भी कुछ घटित नहीं होता, एक पत्ता तक नहीं हिलता, पर मन के भीतर ही भीतर उसे जाने कितनी आँधी-तूफानों को झेलना पड़ता है। उसने झेलें हैं।"(भंडारी, 36) पति के होते हुए भी पति के सुख से वंचित। वैवाहिक जीवन में तकरार के कारण बंटी को पूर्ण रूप से न पा पाने के कारण आहत मन में हताशा के भाव जल्दी आ जाते हैं। आर्थिक रूप से सशक्त शकुन को बस एक ही बात का सुकून है कि उसे पैसे के लिए किसी के आगे हाथ फैलाने की जरूरत नहीं है। किसी के एहसानों के तले दबी नहीं है, इसलिए अपना निर्णय स्वयं ले सकती है। शकुन को वैवाहिक जीवन की नीरसता ने इतना हताश एवं दयनीय बना दिया कि "तर्कों और बहसों में दिन बितते थे आकांक्षा में रातें।"(भंडारी 37) शकुन ने कभी भी अपने स्वाभिमान से समझौता नहीं किया है यही कारण है कि उसका विवाहिक जीवन सफल नहीं रहा। मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में रेडिकल नारीवादी विचारधारा को भी प्रछन्न अर्थों में

Year-4 Volume: I, Jan-March, 2022 ISSN: 2582-1296
The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities

अभिव्यक्त किया है। वकील द्वारा कही गई बात शकुन को रह-रह कर याद आती है- "अजय अपनी जिंदगी की नई शुरूआत कर सकता है तो तुम क्यों नहीं कर सकती।"(भंडारी, 42)

एक साक्षात्कार में मन्नू भंडारी 'बंटी' और 'शकुन' के चरित्र के बारे में बताती हैं- "अजय को तो मैंने साइड में रखा है। केंद्र में बंटी के बाद शकुन ही है। मातृत्व को मैं औरत की कमज़ोरी नहीं मानती, बल्कि यह तो एक गरिमा है। हां, शकुन का चरित्र उसके भीतर की मां और औरत के मध्य द्वंद्व से ग्रस्त एक स्त्री का चरित्र है। उसके भीतर की एक आम औरत कभी प्रबल होती है कभी उसके भीतर की मां। उसे भी अधिकार है एक स्त्री की तरह जीने का, तभी वह सोचती है कि यदि बंटी को दरार ही बनना है तो अजय व मीरा के मध्य बने। यह बिल्कुल ही औरताना फ़ीलिंग है। और जब मां प्रबल होती है तब वह बंटी के प्रति गिल्ट फ़ील करती है।"(भंडारी, साक्षात्कार) एक स्त्री को स्त्री की तरह जीने का जो अधिकार है उसमें कभी पत्नी तो कभी माँ एक बाधा के रूप में आती है। उसकी यह दुविधा भारतीय उपमहाद्वीप की महिलाओं की दुविधा है, लेकिन जैसे ही वह अपनी जिंदगी को तरजीह देने लगती है उसके अस्तित्व का संकट दूर हो जाता है। अजय और शकुन के अहं की टकराहट के कारण ही दोनों के बीच दूरियां बढ़ती चली जाती है जो बाद में तलाक में परिणति होती होती है।

## निष्कर्ष

मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' में बदलते सामाजिक संरचना में टूटते परिवार, दरकते रिश्ते, जीवन में एकाकीपन, दुःख, संत्रास एवं एक स्त्री के अस्तित्व को जिस तरह से अभिव्यक्त किया है वह अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। इस उपन्यास के मार्फ़त मन्नू जी ने केवल स्त्री के अस्तित्व का जो सकंट है उसे लेकर ही सवाल नहीं खड़ा किया है, बल्कि दांपत्य जीवन की दुश्वारियों को अभिव्यक्त किया है। साथ ही बच्चों के परिवरिश में माता-पिता का कर्तव्य और भावनात्मक संबंधों को केवल स्त्री तक सिमित करने तक का चित्रण नारीवादी दृष्टिकोण से किया है। अहं की टकराहट और पितृसत्तात्मक सोच एक बेहतर समाज बनाने में बाधक हैं। 'कलिकथा बाया बाईपास' में अलका सरावगी ने परंपरागत रूढ़िवादीता और भूमंडलीकरण के दबाव में सामाजिक सन्दर्भ को स्त्री के परिपेक्ष्य में देखने का प्रयास किया है जिसके लिए उन्होंने 'बाइपास' का रास्ता चुना है।

## सन्दर्भ सूची

The Asian Thinker

यादव, राजेन्द्र .(2015). *आदमी के निगाह में औरत*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.

भंडारी, मन्नू .(2017). *आपका बंटी*. नई दिल्ली: राधा कृष्ण प्रकाशन.

सरावगी, अलका .(2007).*कलिकथा वाया बाइपा*. पंचकूला: आधार प्रकाशन.

https://oyeaflatoonlcom/solutions-cannot-be-imposed-they-will-come-out-on-their-own-under-pressure-of-circumstances-mannu-bhandari/ (देखा गया 24 जनवरी 2022)

The Asian Thinker